आर्हत जीवन ज्योति

[प्रथम किरणावली]

लेखक —
प्रोफेसर हीरालाल रसिकदास कापडिया, एम० ए०

अनुवादक —
विद्याभूषण पंडित हीरालाल दूगड़

प्रकाशक —
गणेशलाल नाहटा
सेक्रेटरी, श्री जैन धर्म प्रचारक सभा।
नं० ६६, केनिंग स्ट्रीट, कलकत्ता।

प्रथमावृत्ति

वीर सं० २४६३ १००० वि० सं० १९९४

द्रव्य सहायक

शाह चिम्मनलाल वाडीलाल कंपनी

२८ आरमोनियन स्ट्रीट कलकत्ता

के तरफसे

धर्म प्रचारार्थ १००० कापी

भेट।

प्रस्तावना

गुजराती अक्षर ज्ञान जाननेवाले विद्यार्थियोंसे लेकर उत्तरोत्तर ऊँची कक्षाओंके विद्यार्थियोंके लिये ग्यारह किरणावलिया स्व० बाबू जीवनलालजी पन्नालालजीकी तरफसे प्रकाशित हो रही है।

इन किरणावलियोंका मुख्योद्देश विद्यार्थियोंको व्यवहारिक ज्ञानके साथ-साथ धार्मिक ज्ञान और धार्मिक संस्कार देनेका है। इसलिये हमने हिन्दी भाषा-भाषी जैन समाजके हितके लिये इन किरणावलियोंका हिन्दी अनुवाद कराकर प्रकाशित करनेका विचार किया है। अतः आप महानुभावोंकी सेवामें आर्हत् जीवन-ज्योतिकी पहली किरणावलीका हिन्दी भाषानुवाद व्याख्यान दिवाकर, विद्याभूषण श्रीमान् पण्डित हीरालालजी दुगड़ जैन द्वारा कराकर उपस्थित कर रहे हैं और आशा करते हैं कि आगेकी किरणावलियोंका भी हिन्दी अनुवाद क्रमशः प्रकाशित किया जावेगा।

पहली किरणावलीका अनुवाद कराते समय इस बातका पूरा ख्याल रखा गया है कि मूल कर्त्ताका आशय न बदलने पावे परन्तु कुछ नामों और पद्योंको इस आशयसे बदला गया है कि हिन्दी जैन जगतके लिये यह पुस्तक विशेष रोचक बन सके। इसकी सरलताका भी पूरा पूरा विचार रखा गया है। हम आशा करते हैं कि हिन्दी-जैनजगत इसको अपनाकर लाभ प्राप्त करेगा।

अन्तमें स्व० बाबू जीवनलालजी पन्नालालजीके भाई धर्मप्रिय बाबू भगवान-लालजी पन्नालालजीका हम आभार मानते हैं कि जिन्होंने अपने उदार भावसे हमें इन पुस्तकोंका अनुवाद कराकर प्रकाशित करनेकी अनुमति दी है और ब्लाक्स भेजा है तथा बाबू नरेन्द्र सिंहजी सिंघीका भी आभार मानता हूं कि जिन्होंने इस पुस्तकके मूल प्रकाशकसे हिन्दी भाषानुवाद कराकर प्रकाशित करानेकी अनुमति दिलानेमें सहायता की है।

श्री संघका सेवक—
गणेशलाल नाहटा

अनुक्रमणिका

किरण पहली ध्वजा

वह मन्दिर है।

उसके ऊपर ध्वजा है।

वह ध्वजा हवासे फहराती है।

चलो, हम भी ध्वजाएँ फहरावें।

मैं अपनी ध्वजा लाता हूं।

वसन्त ! तुम अपनी ध्वजा लाओ।

कांति ! तुम अपनी ध्वजा लाओ।

ओहो ! हमलोगोकी ध्वजाएं भी फहराने लगी।

किरण दूसरी चरवला
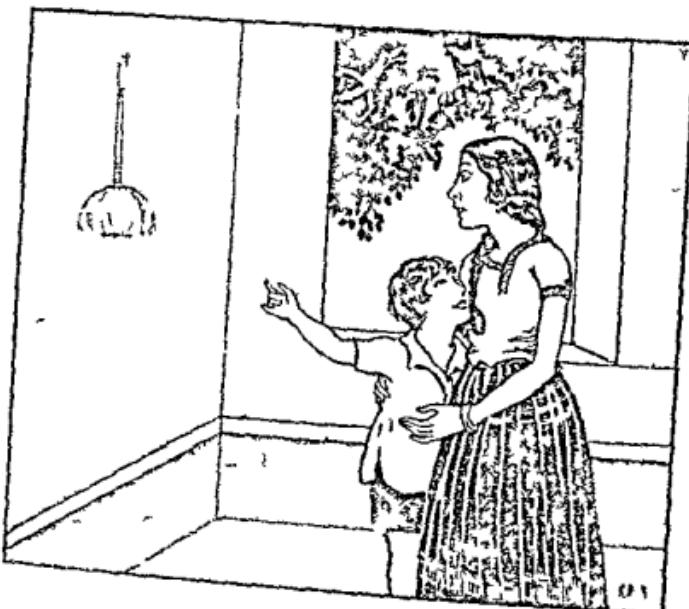
वहन ! वह क्या टंगा हुआ है ?
वह चरवला है।
क्या, तुम मुझे वह देगी ?
हां। लो, मै उसे उतार देती हूँ।
देखो, यह इसकी डंडी है।
यह डंडी काठकी है।
इसके एक तरफ फलिया है।
ये फलिया ऊनकी है।
तुम इन पर हाथ फेरो।
ये कैसी मुलायम है।

किरण तीसरी हँस
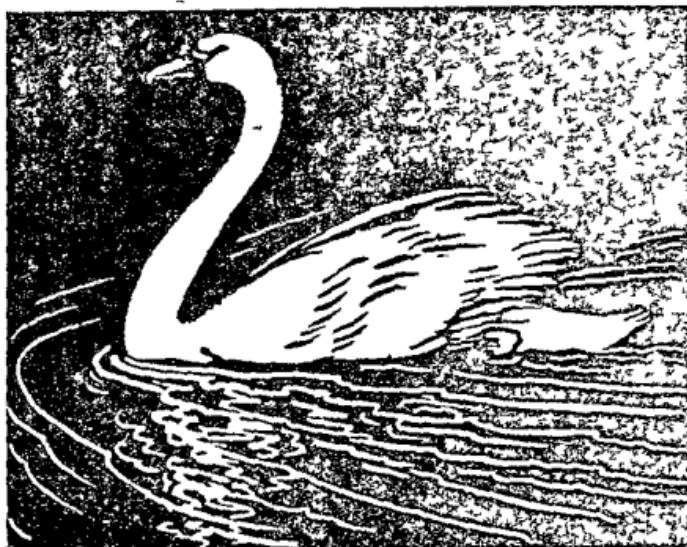
यह हँस है।
यह दूध जैसा सफेद है।
यह तालावमें तैरता है।
इसके एक चोंच है।
यह चोंच कुछ चपटी है।
हँसके दो पंख हैं।
पंखोंसे यह उड़ता है।
ऐसे हँस पर शारदादेवी विराजती है।
हँस, यह शारदादेवी का

किरण चौथी धूपदानी

यह धूपदानी है।
लोग इसे धूपिया भी कहते हैं।

यह धूपदानी पकड़नेका हत्था है।

यह धूपदानीका प्याला है।
इस प्यालेमें आग है।

देखो, मैं आग पर धूप डालता हूँ।
अब यह धूप जलती है।
इस धूपकी कैसी अच्छी सुगंध है।
ऐसी धूपदानी मन्दिरमें होती है।
इससे लोग प्रभुके सामने धूप खेते हैं।
इस प्रकार धूप खेनेको धूप पूजा कहते हैं।

यह कलश है ।

यह कलशका ढकना है ।

यह कलशका नल है ।
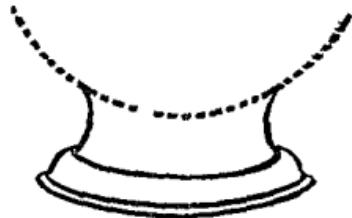
तुम यह कलश लो ।

यह कलशका पेंदा है।

जाओ, इसमें पानी भर लाओ ।

अब इसको जरा टेढ़ा करो ।

देखो, क्या होता है ?

माँ ! नलमें से पानी पड़ता है ।

लोग कलशमें पानी भरते है ।

फिर वे प्रभुको प्रक्षाल कराते है ।

इस प्रकारके प्रक्षालका नाम जल पुजा है ।

किरण छट्ठी त्रिगड़ा
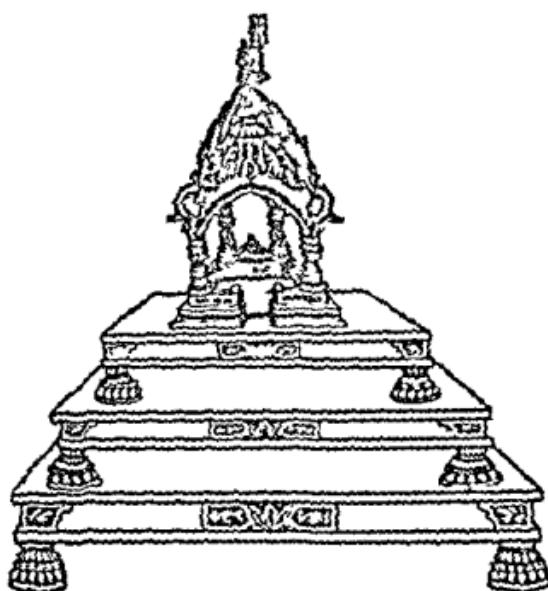
ये तीन चौकिया है इनका नाम त्रिगड़ा है।
ये चौकिया एक दूसरेसे छोटी हैं।
सबसे बड़ी चौकी सबसे नीचे है।
हरएक चौकीके चार पाये है।
हरएक चौकी काठकी है।
काठपर चांदीका पतरा जड़ा हुआ है।
सबसे ऊपरकी चौकीपर सिंहासन है।
सिंहासनमें प्रभुको विराजमान करते है।

हे प्रभो ! आनन्ददाता,
ज्ञान मुझको दीजिये ।

शीघ्र सारे दुर्गुणों को,
दूर हमसे कीजिये ॥

लीजिये हमको शरणमें,
हम सदाचारी बनें ।

ब्रह्मचारी धर्म रक्षक,
वीर व्रतधारी बनें ॥१॥

किरण आठवीं शारदा देवी

यह शारदा देवी है।
यह देवी हंस पर बैठी है।
इसके दो दाहिने और दो बायें कुल चार हाथ हैं।
इसके एक दाहिने हाथमें कमल है।
दूसरे दाहिने हाथसे यह देवी वरदान देती है।
इसके एक बाये हाथमें माला है।
दूसरे बाये हाथमे पुस्तक है।
इस देवीको पूजनेसे हमे ज्ञान प्राप्त होता है।

किरण नवमी प्याऊ

यह पानी की प्याऊ है ।

इस में घड़े रखे हैं ।

घड़ों में पानी भरा है ।

यह पानी कपड़े से छाना जाता है ।

हर एक घड़े पर ढकना है ।

ढकने पर एक लोटा है ।

उस घड़े के पास कुछ प्याले हैं ।

वह आदमी घड़े मे लोटा डुबाता है ।

फिर इस लोटे का पानी इस प्यालेमे भरता है।

जिसको पानी पीना होता है उसे यह आदमी प्याला देता है ।

फिर इस प्याले से वह पानी पीता है ।

किरण दसवीं हाथी

ये दो हाथी हैं।

ऊपर का हाथी काला है।

नीचे वाला हाथी सफेद है।

दोनों के पाँव खम्भे सरीखे हैं।

सूँड मूसल जैसी है।

कान सूप जैसे हैं।

पेट मशक जैसा है।

पूँछ झाड़ू जैसी है।

काले हाथी के दो दाँत हैं।

सफेद हाथी के चार दाँत हैं।

ऐसे सफेद हाथी को ऐरावत कहते हैं।

ऐरावत पर देवों का राजा इन्द्र बैठता है।

काला हाथी रजवाड़ों में होता है।

इस पर राजा बैठता है।

किरण ग्यारवीं अशोक का पेड़ ११
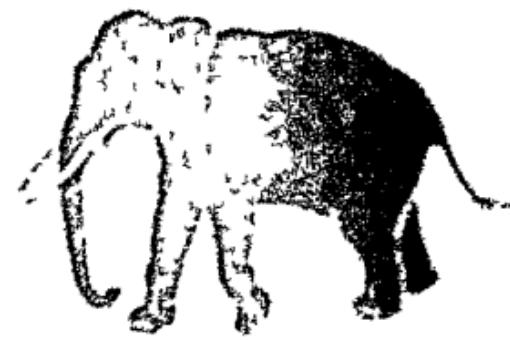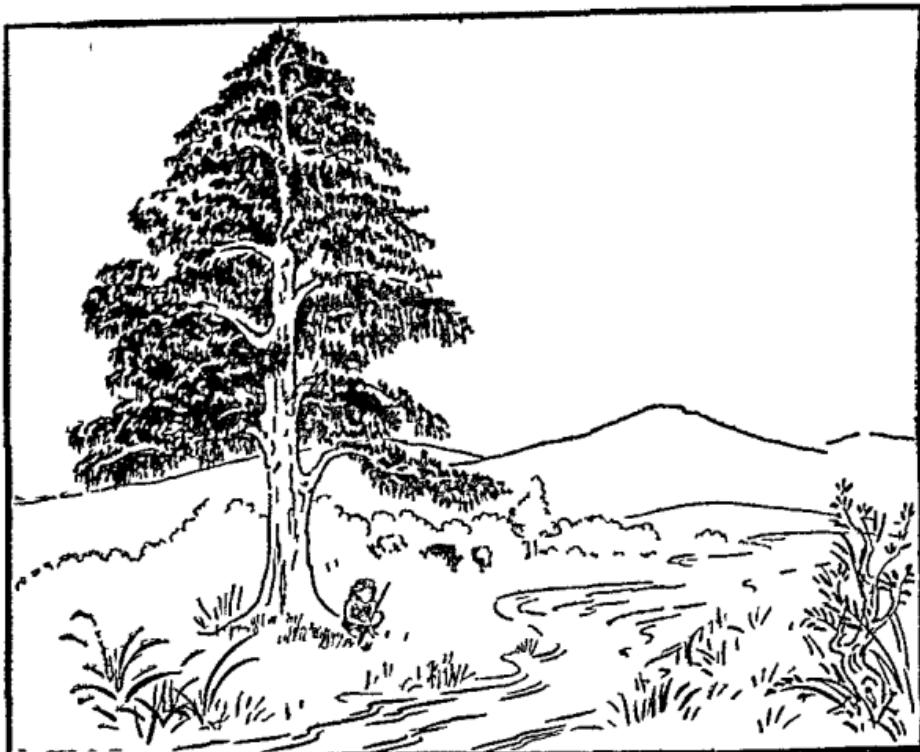
यह अशोक का पेड़ है।
हमारे शहर में ऐसे बहुत पेड़ है।
इस पेड़ की छाया बहुत ठंडी है।
इसकी छायामें बैठने से आनन्द मिलता है।
अशोक के पत्ते दूर से आमके पत्तों जैसे दीखते हैं।
हम लोग दिवाली में इन पत्तोंका तोरण बांधते है।
हम धार्मिक कामों में भी ऐसे तोरण काम मे लाते हैं।

किरण बारहवीं मोर

रमा ! देखो वह मोर है।

इसके पास मोरनी खडी है।

दोनों के सिर पर कलगी है।

मोर के सुन्दर पंख हैं।

हर एक पख पर चन्द्रमा है।

पखों की मोर पीछी बनती है।

मोर पीछी प्रभु की पूजा में काम आती है।

पंखों का पंखा बनता है।

रमा इधर-देखो मोर ने पंख फैला दिये।

अब इसने इन पंखों को पंखे की तरह बनाया है।

इसका नाम है मोर ने अपनी कला बताई।

अब यह मोर नाचता है।

वाह ! मोर, वाह !

१४ किरण तेरहवीं रील (सापड़ा)
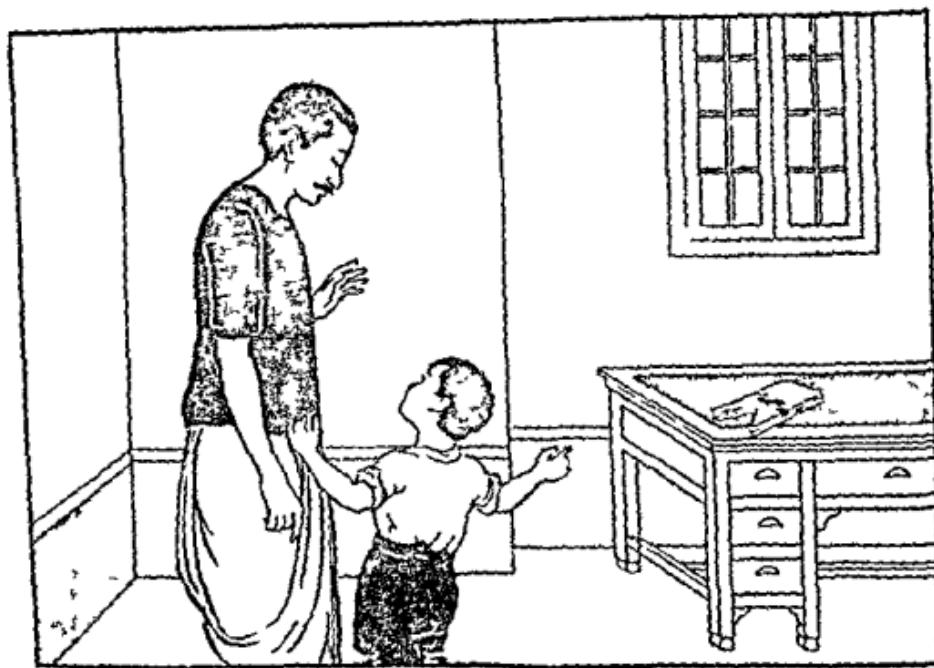
पिता जी ! मेज पर यह काठ की क्या चीज पड़ी है ?

बेटा यह रील है ।

यह रील किस काम में आती है ?

पढ़ते समय इसके अंदर किताब रखी जाती

इस रील में किताब कैसे रखी जाती है

यह रील लाओ मैं तुझे बताऊँ

देखो, यह रील ऐसे किताब की तरह खुलती है।

किताब रील में किस लिये रखी जाती है ?
किताब हाथ मे रखने से मैली हो जाती है।
किताब अधिक चौड़ी करने से फट जाती है।
किताब को रील मे रखने से अधिक चौड़ी नही होती।
इस लिये रील को काम मे लाने से किताबकी रक्षा होती है।
किताब बड़ी हो तो वह हाथ में ठीक नहीं रहती।
और किताब मुंह के पास रख कर पढ़ने से उस पर थूक पड़ता है।
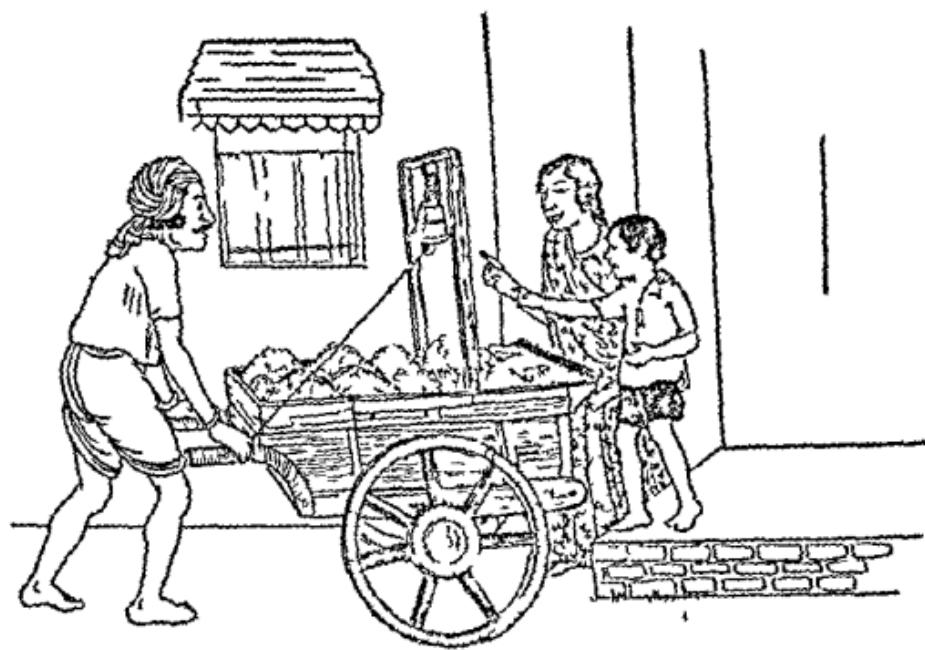
जिनपाल—भुआ ! वह चिवड़ा वाला आ रहा है।

कांता—जिनपाल ! तुमको कैसे मालूम हुआ ?

जिनपाल—यह टन टन की आवाज आती है, इसी से।

कांता—तुम्हारी बात सच है, वह चिवडे वाला आ गया। चलो तुझे चिवडा दिलाऊँ। एं भाई ! तुम इस लडके को एक पैसे का चिवड़ा दो।

चिवडा वाला—हाँ, बहन देता हू।

जिनपाल—भुआ ! चिवड़ा वाला तो अभी भी घंट बजा रहा है।

कांता—वह घट किस तरह बजा रहा है ?

जिनपाल—डोरी खींच कर।

इससे बडा घंट कहीं

जिनपाल—जी हाँ ! हमारी पाठशालामें।

कांता—मन्दिरमें भी बड़ा घंट होता है। वह जंजीरसे टंगा रहता है। मन्दिरमें दर्शन करनेवाले लोलकको हिलाते हैं जिससे वह घंट बजता है ?

जिनपाल—लोलक किसे कहते हैं।

कांता—देखो, इस घंटके बीचमें जो लटकता है। उसे लोलक कहते हैं। इस लोलकमें एक छेद है और घंटेके अन्दर भी ऊपरमें एक छेद है। इन दोनों छेदोंमें एक कड़ी डाली हुई है। इसी कड़ीसे लोलक लटक रहा है। लोलकको हिलानेसे वह घंटसे टकराता है और इसीसे टन् टनकी आवाज होती है।

जिनपाल—भुआ ! चिवड़ा वाला मुझे चिवड़ा क्यों नहीं देता ?

कांता—यह दे रहा है। ले लो।

किरण पन्द्रहवीं आदिदेव

आदि जिनन्द दयाल हो,
मेरी लागी लगनवा ॥टेक॥
विमलाचल मडन दुःख खंडन,
मडन धर्म विशाल हो ॥
मेरी लागी लगनवा ॥ १ ॥
विषधर मोर चोर कामी जन,
दरिसनकर निहाल हो ॥
मेरी लागी लगनवा ॥ २ ॥
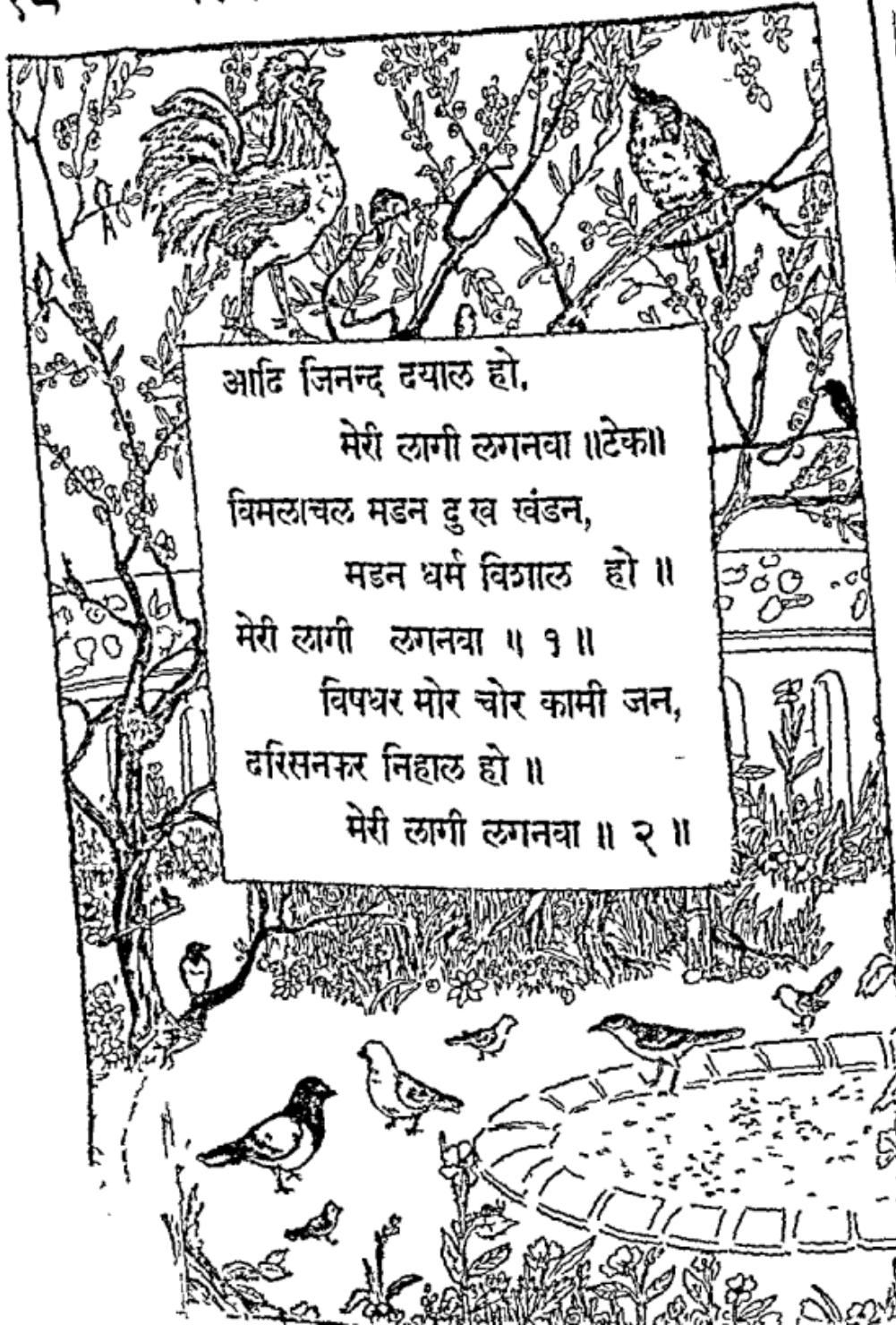
हूं अनाथ तू त्रिभुवन नाथा,
कर मेरी संभाल हो ॥
मेरी लागी लगनवा ॥ ३ ॥
आतम आनन्द कंद के दाता,
त्राता परम कृपाल हो ।
मेरी लागी लगनवा ॥ ४ ॥
(विजयानन्द सूरि)
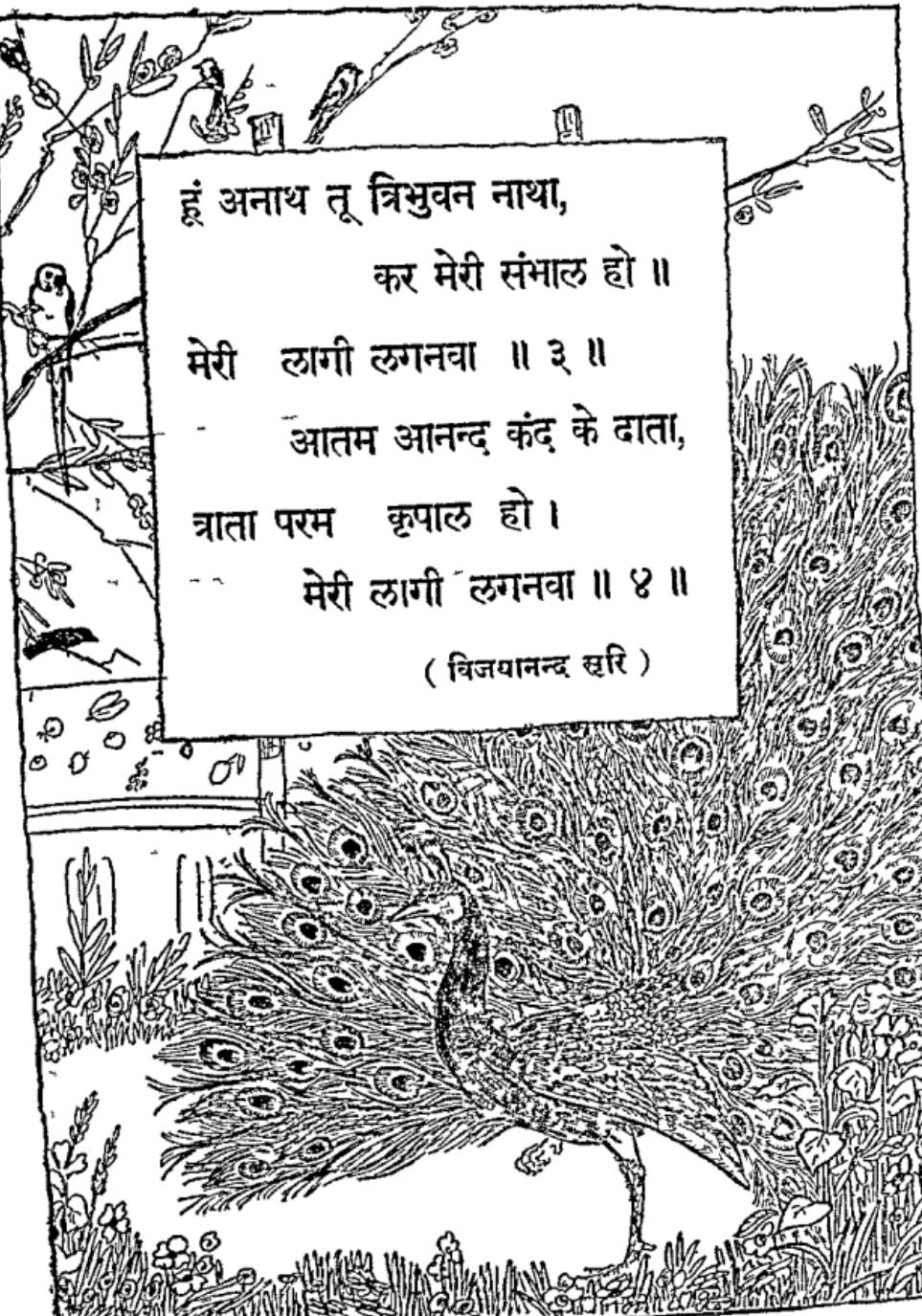
२० किरण सोलहवीं नवकारवाली
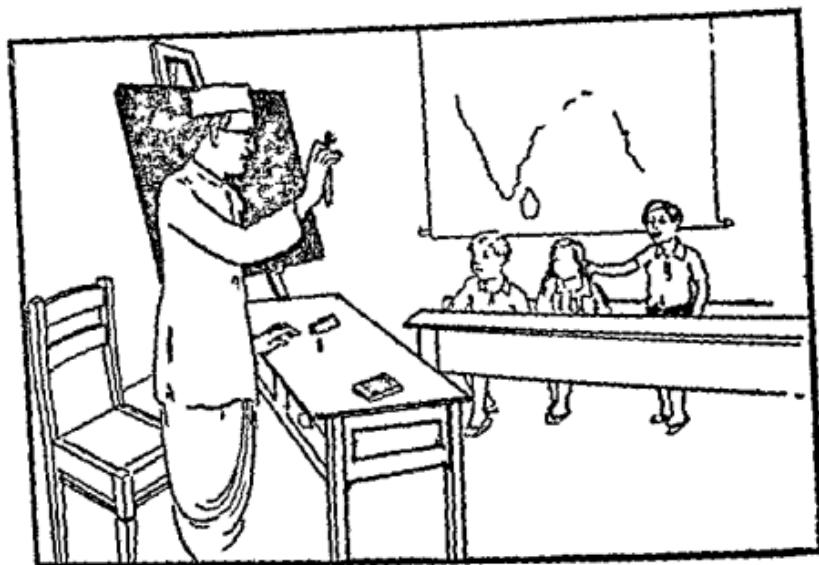
गुरुजी—मोहन ! मेरे हाथमें यह क्या है ?

मोहन—नवकारवाली ।

गुरुजी—यह नवकारवाली काहेकी बनी है ?

मोहन—मणकोंकी और डोरीकी ।

गुरुजी—जिनदत्त ! तुम इधर आओ । देखो ये मणके काहेके बने हैं ?

जिनदत्त—लकडीके ।

गुरुजी—बालको ! यह लकडी हलकी जातकी नहीं है किन्तु चंदनकी है । सूत और चांदीके भी मणके बनते हैं । जिनदत्त इस नवकारवालीमे कितने गिनकर बताओ ।

/ ३, ग—१०६

गुरुजी—सच है। बालको! तुम सब इस नवकारवालीकी तरफ देखो! इसके दोनों छोर समान रखनेके लिये फुन्देके नीचे एक मणका रखा गया है। हमलोग इस मणकेको मेरु, सुमेरु अथवा मेर भी कहते है। यह मेरु गिननेके काम नही आता। सिर्फ १०८ मणके ही गिने जाते हैं।

देवकुमार—गुरुजी! नवकारवाली किस तरह गिनी जाती है?

गुरुजी—नवकारवालीको दाहिने हाथके अंगुठेपर रखना फिर अंगुठेके पासकी अंगुलीसे इसके मणके धीरे-धीरे फिराना। पूरी गिनी जाय तब पलट कर गिनना किन्तु मेरुका उलङ्घन नही करना चाहिये।

सुनार—भानुचन्द्र सेठ है क्या ?

सेठ—हां। कौन ? मोतीराम।

सुनार—जी हाँ।

सेठ—क्या छत्र तैयार हो गये ? कल तो उन्हे प्रभुके मस्तकपर लटकाया जाना ही चाहिये।

सुनार—जी हां ! मे तीनों छत्र तैयार करके ले आया हूं। सबसे छोटे छत्रको सबसे ऊपर रखा है हरएक छत्रकी कड़ी खूब मजबूत बनाई है। जञ्जीरें भी बराबर बैठाई है और हर एक छत्रके किनारोंपर घूंघरियां भी लगा दी हैं।

सुनार—लीजिये, देखिये। ये कैसे बने है ?

सेठ—तीनों छत्र जैसे चाहिये वैसे ही चढ़ाव उतार दार बने है लो यह तुम्हारी मजदूरी।
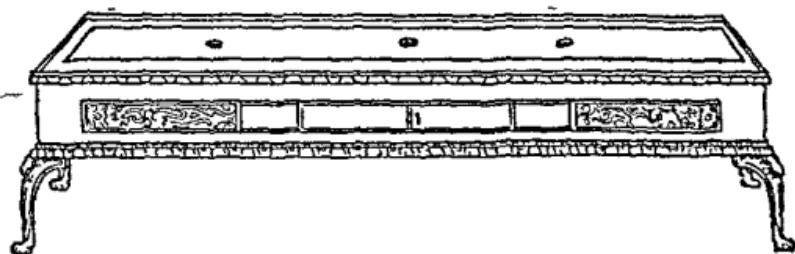
धर्मदास—पिताजी ! बढ़ईने यह कैसी चौकी बनाई है ?

पिता—धर्मदास ! यह कोई चौकी नही, यह तो भंडार है।

धर्मदास—इस भंडारके चौकी की तरह चार पाये तो हैं ?

पिता—यह सच है। किन्तु चौकी तो भंडार की तरह सब तरफ से बन्द नहीं होती।

धर्मदास—हां ! अब मेरी समझ में आया। पिताजी इस भंडार के ऊपर तीन छेद क्यों हे ?

पिता—इस भंडार पर पतरा जड़नेका काम अभी बाकी है। यह काम पूरा हो जानेसे यह भंडार मंदिरजीमें रखा जावेगा। वहां दर्शनको आनेवालों मेंसे किसी को पैसा चढ़ाना होगा तो वह इन छेदों मेंसे किसी मे डाल देगा।

धर्मदास—तो फिर आस पास के दोनों छेद छोटे और बीच का बड़ा क्यों ?

पिता—कितने ही आदमी भंडार मे बादाम मिश्री वगैरह डालते

हैं। बादाम जैसी मोटी चीज डाली जा सके इसलिये बीचका छेद बड़ा बनाया गया है इस छेद मे डाट बैठाना बाकी है। उसे यह बढ़ई बैठा बैठा बना रहा है।

धर्मदास—भंडार मे पैसे और बादाम एकत्र हो जाये तो किस तरह वे बाहिर निकाले जा सकते हैं ?

पिता—देखो। इस भडार के उस तरफ एक दरवाजा है। उसे खोल कर पैसे वगैरह बाहर निकाल लिये जा सकते हैं।

विजयपाल—पिताजी ! क्या मैं आपके साथ आऊँ ?
पिता—हाँ, चलो ।
विजयपाल—आपके हाथमें यह क्या है ?
पिता—चंवरकी डंडी ।
विजयपाल—इस डंडीसे क्या काम है ?
पिता—सुनारसे इसमें बालोंका गुच्छा बिठवाना है ।
विजयपाल—आपके पास बालोंका गुच्छा तो नहीं है ?
पिता—हम इनको खरीद करनेके लिये सामने बाजारमे जाते हैं। देखो, उस दुकानमें बालोंके गुच्छे लटक रहे हैं। चलो हम वहाँ चलें ।
विजयपाल—ये बाल तो बहुत सफेद हैं ।
पिता—हाँ, चमरी गायकी पूंछके बाल ऐसे सफेद ही होते हैं । विजयपाल ! देखो, दुकानदारने इन बालोंको पटवेसे लकड़ीके ऊपर रेशमकी डोरीसे अच्छी तरह बंधवाया है ।
विजयपाल—किसलिये बंधवाया है ?
पिता—इसलिये कि बाल बिखर न जाएँ ।
विजयपाल—मुझे यह डंडी दीजिये ।

पिता—लो। सभाल कर रखना। चलो अब इस गुच्छेको लेकर हम सुनार मोतीरामके यहाँ चले।

विजयपाल—पिताजी! मोतीराम सुनार इस डंडीमें गुच्छा किस तरह बिठावेगा ?

पिता—इस डंडीको एक तरफ प्यालेजैसा है। मोतीराम इसमें लाख गरमकर उसका रस भरेगा, फिर इस गुच्छेवाली लकडीको इसमे बिठावेगा। यह देखो, उसकी दुकान आ गई। तुम इसे डंडी दो। मैं इसे यह गुच्छा देता हू।

थोडी देरमे मोतीरामने चवर तैयार करके विजयपालके हाथमें रखा। इसे लेकर वह बहुत खुश हुआ और बोला।

—चवर किस काममे आता है ?

—चवर प्रभुको ढोलनेके काम आता है।
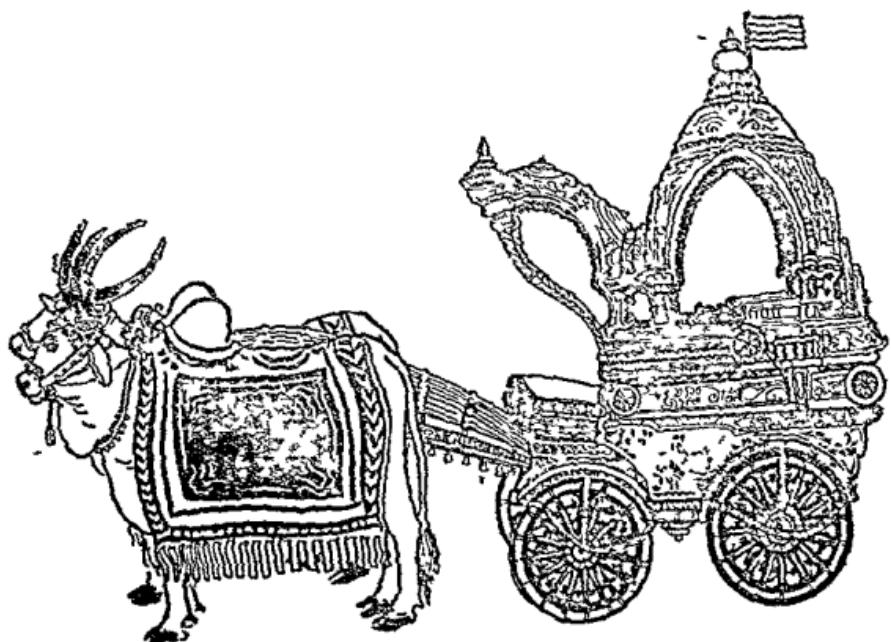
तुम सबने रथ तो देखा ही होगा। कदाचित किसीने नही देखा हो तो वह ऊपर दिये हुए उसके चित्रको देख लेवे। रथ एक तरहकी गाड़ी है, उसके चार पहिये होते है।
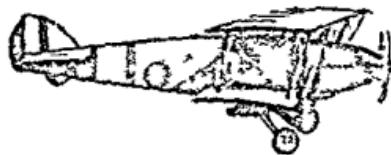
रथ रेलगाड़ीकी तरह भाफ या बिजलीसे नही चलता और हवाई जहाजकी तरह उड़ता भी नही।

रथमें प्राय. दो बैल जोते जाते है। कभी कभी दो घोडे भी जोते जाते है और कभी कभी आदमी भी रथको खींचते है।

रथ विशेषकर धार्मिक जुलुसोंमें होता है। इस रथको हांकने के लिये एक आदमी आगे बैठता है। दूसरा आदमी प्रभुकी प्रतिमाको दोनों हाथोंसे ठीक रखनेके लिये रथके भीतर पिछली तरफ बैठता है और एक एक आदमी प्रभुकी दाहिनी और बाईं ओरसे चंवर ढोलते है।

मासी—धनपाल! मैं समझती थी कि तुम अब सुधर गये होगे, परन्तु तुम तो अभी वैसे के वैसे ही नटखट रहे मैं नाक साफ करने गई इतनेमें ही तुमने कैंची लेकर यह जरी कतर डाली और यह कपड़ा भी तुमने ही कतरा होगा!

धनपाल—मासीजी! यह तो मैं कैंचीकी धार देख रहा था।

मासी—धनपाल! तुम्हारी यह शरारत ठीक नहीं है। अच्छा हुआ कि तुमने यह मखमल नहीं कतरी, नहीं तो कठिनाई होती।

धनपाल—कैसे?

मासी—मखमलके ये दोनो टुकड़े मंदिरजीके हैं। मैं पूठिया और चंदरवा बनानेके लिये ले आई हूं।

देखो, यदि तुमने पूठिया कतरा होता तो मुझे इसके दाम देने पड़ते और मेरी सारी की हुई मेहनत भी फिजूल जाती।

धनपाल—आपने क्या मेहनत की है ?

मासी—इस मखमल पर सुन्दर वेल निकलवाकर मैंने इसमे जरी भरी है। इसे भरनेमे मुझे कुछ मेहनत नही करनी पड़ी होगी क्या ?

धनपाल—मासीजी ! मेरी भूल हुई। अब मैं पछताता हूं।

मासी—धनपाल ! तुम ऐसा काम फिर मत करना।

धनपाल—वहुत अच्छा। मासी माँ ! आप चंदरवा कव भरोगी ?

मासी—इस पूठियेका काम हो जावे तो चंदरवेको भरनेका विचार है।

धनपाल—चंदरवे और पूठियेमें क्या भेद है ?

मासी - पूठिया, प्रभुकी प्रतिमाके पीछे बाधा जाता है और चदरवा प्रभुके मस्तकसे ऊ चा ऊपर बाधा जाता है परन्तु पूठिया और चदरवा दोनों ही मखमलके होते है और दोनोंका रग भी एकसा ही होता है।

एक समय विमला तोरण वना रही थी इतनेमे उसकी पुत्री कमला उसके पास आकर वैठी और वोली। माताजी ! आप इस तोरणमें क्या काढ़ रही है ?

विमला—मैंने ये दो स्वस्तिक (साथिये) वनाये हैं और तीसरा काढ़ रही हूं।

कमला—माताजी ! मैं भी स्वस्तिक वनाऊं ?

विमला—नही ! तुमको अभी यह वनाना नही आता। यदि तुमको कुंकुम (रोली) से स्वस्तिक वनाना सीखना हो तो वनाकर वताऊं ?

कमला—हाँ, माताजी ! वनाकर वताओ।

विमला—तुम एक थाली लाओ। साथ ही कुंकुम भी लेती आना।

कमला—माताजी ! यह लो, मैं ले आई।

विमला—देखो, यह मेरे दाहिने हाथकी सवसे छोटी अंगुली है। यह कनिष्टा अंगुली कहलाती है। इसके पासकी अंगुली को अनामिका कहते हैं। हम लोग पूजा भी इसी अंगुली से करते हैं। देखो, अव मैं इस अंगुलीसे कुंकुम लेती हूं।

सबसे पहले मैं एक खडी रेखा खींचती हूं। फिर इसके बीचसे एक आडी रेखा बनाती हूं। अब इस खड़ी रेखाके दोनों छोरसे एक एक छोटी आडी रेखा खींचती हूं। इसी तरह आडी रेखाके दोनों छोरसे एक एक छोटी खड़ी रेखा बनाती हूं। ये चार छोटी रेखायें स्वस्तिक की पंखडियां कहलाती है।

कमला—माँ! तोरणमेंके दोनों स्वस्तिक एकसे ही है।

विमला—हम कुम्कुमसे स्वस्तिक इतना ही नहीं बनाते किन्तु इसके चारों खानोंमे एक एक बिन्दु भी बनाते हैं। हमलोग मदिरजीमे तो चावलोंसे स्वस्तिक बनाते है यह जरा दूसरी तरहका होता है।

कमला—वह कैसा होता है?

विमला—देखो, वह भी मै तुम्हे इस थालीमे बनाकर बताती हूं। तुम बराबर ध्यान रखना। मुझे स्वस्तिक बनाना मुझे बहुत पसंद है।

किरण तेईसवीं डंडा

एक दिन रसिकलाल शाक लेकर घर आ रहे थे। उनके साथ उनका पुत्र अभयकुमार भी था। सामनेकी तरफसे एक जैन साधु आ रहे थे। उनको देख कर रसिकलालने अभयकुमारसे कहा कि देखो, ये अपने गुरु महाराज आ रहे हैं। तुम इनको हाथ जोड़ो। जब वे थोड़ी दूर गये तब अभयकुमारने कहा, पिताजी! मुझे एक लकड़ी चाहिये।

रसिकलाल—तुमको कैसी लकड़ी चाहिये?

अभयकुमार—जैसी गुरु महाराजके हाथमें थी वैसी।

रसिकलाल—बेटा! वैसी लकड़ी तो हमलोग नहीं रख सकते यह लकड़ी तो पाँवसे नाकतक लंबी थी और ऐसी लकड़ी तो हमारे साधु-साध्वी ही रखते हैं। हम लोग इसे डंडा कहते है। लकड़ी नहीं कहते। अभयकुमार! हमारे साधु और साध्वी डंडा क्यों रखते है यह तो तुम शायद नहीं जानते?

अभयकुमार—नहीं जी।

सवसे पहले मैं एक खड़ी रेखा खीचती हूं। फिर इस
वीचसे एक आडी रेखा वनाती हूं। अव इस खड़ी रेखा
दोनों छोरसे एक एक छोटी आड़ी रेखा खीचती हूं। इस
तरह आड़ी रेखाके दोनों छोरसे एक एक छोटी खड़ी रेखा
वनाती हूं। ये चार छोटी रेखायें स्वस्तिक की पंखड़ियां
कहलाती हैं।

कमला—मां! तोरणमेंके दोनों स्वस्तिक एकसे ही हैं।

विमला—हम कुम्कुमसे स्वस्तिक इतना ही नही वनाते किन्तु इसके चारों खानोंमे एक एक विन्दु भी वनाते हैं। हमलोग मंदिरजीमें तो चावलोंसे स्वस्तिक वनाते हैं यह जरा दूसरी तरहका होता है।

कमला—वह कैसा होता है?

विमला—देखो, वह भी मैं तुम्हे इस थालीमे वना-
कर वताती हूं। तुम वरावर ध्यान रखना।
स्वस्तिक वनाना मुझे वहुत पसंद है।

किरण तेईसवीं डंडा

एक दिन रसिकलाल शाक लेकर घर आ रहे थे। उनके साथ उनका पुत्र अभयकुमार भी था। सामनेकी तरफसे एक जैन साधु आ रहे थे। उनको देख कर रसिकलालने अभयकुमारसे कहा कि देखो, ये अपने गुरु महाराज आ रहे हैं। तुम इनको हाथ जोड़ो। जब वे थोड़ी दूर गये तब अभयकुमारने कहा, पिताजी! मुझे एक लकड़ी चाहिये।

रसिकलाल—तुमको कैसी लकड़ी चाहिये ?

अभयकुमार—जैसी गुरु महाराजके हाथमें थी वैसी।

रसिकलाल—बेटा। वैसी लकड़ी तो हमलोग नहीं रख सकते यह लकड़ी तो पांवसे नाकतक लंबी थी और ऐसी लकड़ी तो हमारे साधु-साध्वी ही रखते हैं। हम लोग इसे डंडा कहते हैं। लकड़ी नहीं कहते। अभयकुमार! हमारे साधु और साध्वी डंडा क्यों रखते हैं, यह तो तुम शायद नहीं जानते ?

अभयकुमार—नहीं जी।

रसिकलाल—हम लोगोंके साधु और साध्वी सदा पैदल चलकर एक गांवसे दूसरे गांव जाते हैं। रास्तेमें कही चिकना कीचड हो तो वे फिसल पड़नेसे बचते हैं। कभी नदी या नाला मिले तो उसमें कितना पानी है वे इस डंडेसे माप लेते हैं।

और कोई साधु अथवा साध्वी अशक्त हो तो चलते समय डंडा उन्हें सहारेका काम देता है। साधु और साध्वियोंको डंडा इन सभी कामोंमें काम आता है। इसलिये इसे रखते हैं।

अभयकुमार—पिता जी! मुझे ऐसा डंडा तो नहीं चाहिये। मुझे तो घोडा बनानेके लिये लकड़ी चाहिये।

पिता—तुमने बाजारमें क्यों नहीं याद दिलाई? लो अभी तो यह अपने दादाजीकी लकड़ीसे खेलो। कल तुम्हारे लिये एक लकडी लेता आऊँगा।

अभयकुमार—पिता जी देखो यह मेरा घोडा है।

इन्द्रकुमार—चाचीजी ! मेरे चाचाजी कहाँ गये हैं ?

मृगावती—ठठेरेकी दूकानपर ।

इन्द्रकुमार—ठठेरेकी दूकानपर क्या मिलता है ?

मृगावती—ताँबा और पीतलकी बनी चीजें ।

इन्द्रकुमार—आज आपने क्या चीज मँगाई है ?

मृगावती—मैंने पीतलकी आरती मँगाई है ।

इन्द्रकुमार—आरती कैसी होती है ?
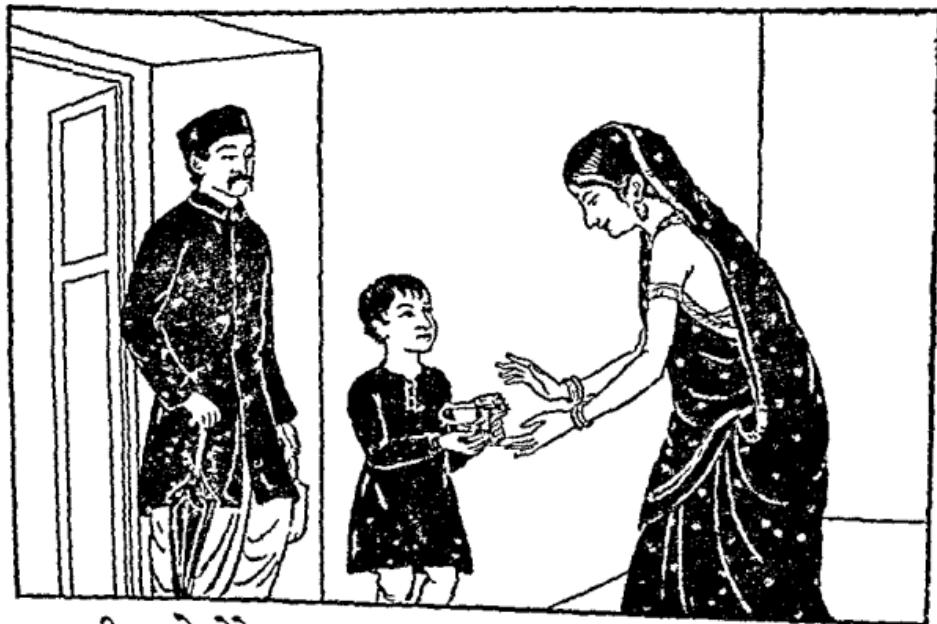
मृगावती—ये तेरे चाचाजी आ गये । उनसे आरती ले आओ । मैं तुमको बताऊँ । देखो, यह आरतीको पकड़नेका हत्था है और ये पाँच खानोंवाला उसका मुँह है । ये सभी खाने बराबर अन्तरपर हैं ।

इन्द्रकुमार—ये खाने किसलिये रखे गये हैं ?

मृगावती—वत्तियां रखने और घी भरनेको। तुम्हारे चाचाजी कल मन्दिरजी जावेंगे, तब मैं इन खानोंमें घी भरकर वत्तियां रख दूंगी। फिर वे आरती उतारेंगे।

इन्द्रकुमार—आरती कैसे उतारी जाती है ?

मृगावती—जलाई हुई वतियोंवाली आरतीको हाथमें रखकर प्रभु-के सामने खड़ा रहना। फिर धीरे धीरे आरतीको एक तरफसे दूसरी तरफ गोलाकार फिराया जाता है। इस तरह करनेको आरती उतारना कहते हैं।

इन्द्रकुमार—चाचीजी! आप चारती उतारकर मुझे न बताओगी ?

चाची—हां, बताती हूं। जरा ठहरो। मैं आरती तैयार कर लाऊं।

इन्द्रकुमार—चाचीजी! आपने इन वत्तियोंको जलाया। इससे सारे घरमें उजाला हो गया।

चाची—वह श्री शारदा देवीकी तस्वीर है। चलो हम लोग उसके पास चलें और आरती उतारें। तुम आरती वराबर पकड़ो।

इन्द्रकुमार—चाचीजी! मुझे आरती उतारनेमें वड़ा आनन्द मिलता है।

इन्द्रकुमार—ये खाने किसलिये रखे गये है ?

मृगावती—वत्तियां रखने और घी भरनेको। तुम्हारे चाचाजी कल मन्दिरजी जावेंगे, तब मैं इन खानोंमें घी भरकर बत्तियां रख दूँगी। फिर वे आरती उतारेंगे।

इन्द्रकुमार—आरती कैसे उतारी जाती है ?

मृगावती—जलाई हुई वतियोंवाली आरतीको हाथमे रखकर प्रभु-के सामने खडा रहना। फिर धीरे धीरे आरतीको एक तरफसे दूसरी तरफ गोलाकार फिराया जाता है। इस तरह करनेको आरती उतारना कहते हैं।

इन्द्रकुमार—चाचीजी! आप चारती उतारकर मुझे न बताओगी ?

चाची—हां, बताती हूं। जरा ठहरो। मैं आरती तैयार कर लाऊँ।

इन्द्रकुमार—चाचीजी! आपने इन बत्तियोंको जलाया। इससे सारे घरमे उजाला हो गया।

चाची—वह श्री शारदा देवीकी तस्वीर है। चलो हम लोग उसके पास चलें और आरती उतारें। तुम आरती बराबर पकडो।

इन्द्रकुमार—चाचीजी! मुझे आरती उतारनेमें बड़ा आनन्द मिलता है।